# शरीअत में मसलहेत
# व
# ज़रूरत का लिहाज़

लेखक– अल्लामा इब्ने कय्यिम रह0

हिन्दी अनुवाद– डा0 रफ़ीक़ अहमद

''वक्त और जगह में बदलाव, हालात और परिस्थितियों के फर्क और रस्म-रिवाज की तब्दीली से फ़तवा बदल जाता है'' फतवा के बदल जाने का यह बड़ा अहम उसूल है। जो लोग इसकी हक़ीक़त को नहीं जानते वह शरीअते इस्लामी के बारे में भयानक गल्तियाँ करते हैं जिनकी वजह से शरीअत के अन्दर तन्गी, मशक्कत, और तकलीफ़.... की ऐसी सूरतें गढ़ ली गयी है जिनके बारे में साफ मालूम होता है कि यह रौशन शरीअत- जो इन्सानी मसलहतों और तकाज़ो का पूरा-पूरा लिहाज़ करती है- उनको पसन्द नहीं करती है। क्योंकि शरीअत की बुनियाद हिकमत और बन्दों के दुनयवी और उखरवी तकाजो और मसलहतों पर रखी गयी है, बल्कि शरीअत मुकम्मल इन्साफ़ और बराबरी, रहम व हमदर्दी और सरासर मसलहत व हिक्मत है। इसलिए हर वह मसला जो इन्साफ़ के बजाये ज़ुल्म व ज़्यादती का, आसानी के बजाये परेशानी का, मसलहत के बजाये फ़साद, और हिक्मत के बजाये बेहूदगी का सबब बन जाये वह हरगिज़ शरीअत का मसला नहीं हो सकता। चाहे तावील और व्याख्या के ज़रीये उसे शरीअत के निज़ाम में जबरदस्ती ठूंस दिया जाये।

दरअस्ल शरीअत नाम है इन्सानों के दरम्यान अल्लाह तआला के इन्साफ का, मखलूक पर उसकी रहमत व मेहरबानी का, रूये ज़मीन पर उसकी बखशिश व सखावत का बल्कि शरीअत नाम है उस हिकमते इलाही और खुदाई तदवीरों से जिसकी शान व शौकत उसकी ज़ात

की मुकम्मल गवाही और उसके रसूलों की मुकम्मल सच्चाई का सुबूत प्रदान कर रही हैं। यह वह खुदाई रोशनी है कि उसी से अक़लमन्दों में रोशनी हासिल की। यह वह खुदाई चिराग़ है कि सत्य को खोजने वाले उसी के बदौलत कामयाब हुये। यह वह नुस्खा-ए-शिफ़ा है कि उसी के फैज़ (उपकार) से हर बीमार को दवा मिली। यही वह सीधा रास्ता है कि जो इस पर चला वह सच्चा मार्ग पा गया। शरीअत ऑखों के लिए ठंठक, दिलों के लिए ज़िन्दगी और रूहों के लिये शादाबी है। ज़िन्दगी और अमल, इज़्ज़त व हिफाज़त, गिज़ा व दवा और रोशनी और शिफा का वजूद उसी का शुक्रगुज़ार है। काइनात की हर खूबी इसी से ग्रहीत है और हर खराबी उसी से दूरी का नतीजा है। अगर शरीअते इलाही के यह बचे खुचे निशानात भी न होते तो दुनिया का बाज़ार उजड़ चुका होता और दुनिया खत्म हो चुकी होती। चूंकि इन्सानों की सुरक्षा और काइनात की व्यवस्था शरीअत के वजूद से सम्बद्ध है और शरीअत ही के ज़रीये से अल्लाह तआला ने ज़मीनों और आस्मानों को नष्ट होने से रोक रखा है। इस लिए जब कुदरते इलाही दुनिया को खत्म करने का फैसला कर लेगी तो शरीअत के यह बाक़ी निशानात भी मिटा दिये जायेंगे। इसलिए वह शरीअत जिसको लेकर नबी सल्ल० का आगमन हुआ हैं काइनात की जान, कामयाबी की बुनियाद और मआश व मआद (अर्थ और आखिरत) की सिआदत का मर्कज़ है। अब हम अल्लाह की मदद और तौफीक से आदेशों के बदल जाने के उसूल को कुछ मिसालों

के ज़रीये विस्तार से बयान करते हैं ।

*मुनकर (बुराइयों) को मिटाने में हालात का लिहाज :*

मुनकर को मिटाने को नबी सल्ल० ने उम्मत के लिए शरीअत के निहायत अहम वाजबात में से क़रार दिया है ताकि मुनकर के खात्मे से वह मारूफ़ (भलाई) हासिल हो जिसको अल्लाह और उसका रसूल पसन्द करते हैं। लेकिन अगर किसी मुनकर की मुख़ालफ़त उससे बड़ी और रसूल सल्ल० के नज़दीक भयानक बुराई पैदा कर देने का ज़रीआ बनती हो तो उससे टकराना उचित नहीं है। जबकि उसका वजूद बजाये ख़ुद अल्लाह को नापसन्द है और उसका इर्तिकाब करने वाले ख़ुदा के प्रकोप को दावत देते हैं। मिसाल के तौर पर हुक्मरानों और बादशाहों के अन्दर बुराई और खराबियों को देखकर उनके खिलाफ़ बग़ावत करना सही नहीं है। क्योंकि यह चीज़ सारी फ़ितनों की जड़ है और इससे क़ियामत तक के लिये फ़ितना व फ़साद का दरवाज़ा खुल जायेगा। चुनांचे जब सहाबा-ए-कराम रज़ि० ने रसूल सल्ल० से ऐसे शासकों के ख़िलाफ़ युद्ध की इजाज़त मांगी कि जो नमाज़ को वक्त पर अदा न करते थे तो आप सल्ल० ने उन्हें रोका और फ़रमाया ''ला, माअकामुस्सलात'' नहीं, जब तक वह नमाज़ कायम करते रहें और आप सल्ल० ने फ़रमाया...

जो शख्स अपने अमीर के अन्दर कोई नापसन्दीदा बात देखे तो वह सब्र से काम ले और उसकी इताअत से आज़ाद न हो।

चुनांचे इस्लामी इतिहास में बरपा होने वाले फितनों और मुसलमानों की आपसी झगड़ों के दौरान इस्लाम पर जो कुछ बीती है, जो व्यक्ति इसका गहराई से अध्ययन करेगा उसे मालूम हो जायेगा कि उसका मूल कारण यही था कि उपर्युक्त उसूलों को नज़र अन्दाज़ कर दिया गया और मुनकर को सहन न किया जा सका, बल्कि उसको मिटाने की हिकमत को नजर अन्दाज़ करने की कोशिश की गयी। जिसका नतीजा यह निकला कि यह कोशिश और अधिक फ़ितने व फ़साद फैलाने और पहले से भी खतरनाक मुनकर को जन्म देने का कारण बनी, मक्का में नबी सल्ल० की ऑखों के सामने बड़े-बड़े मुनकरात का इर्तिकाब होता था। मगर आप सल्ल० खामोश रहते थे। यही नहीं बल्कि जब अल्लाह की मदद से मक्का फतेह हो गया और दारूल इस्लाम बन गया तो आप सल्ल० ने काबे की इमारत तबदीली करके उसे हज़रत इब्राहीम अलै० की बुनियादों पर क़ायम करने का संकल्प कर लिया, लेकिन फिर आप सल्ल० सामर्थ और शक्ति के बावजूद सिर्फ यह सोच कर रुक गये कि क़ुरैश जो नये-नये कुफ्र से निकल कर इस्लाम के दामन में आ रहे हैं इस परिवर्तन को बर्दाश्त नहीं करेंगे और नतीजा यह होगा कि जो खराबी अब मौजूद है उसकी अपेक्षा बड़ी खराबी पैदा हो जायेगी, इसी उसूल के अन्तर्गत आप सल्ल० ने नाफरमान और ज़ालिम हुक्मेरानों के मुक़ाबले में तलवार उठाने की इजाज़त नहीं दी। क्योंकि उससे ऐसी खराबियां पैदा होने का डर था जो उनकी बुराई

से कही ज़्यादा होती ।

## *मुनकर को मिटाने की चार सूरतें :*

मुनकर को मिटाने के चार दर्जे हैं–

1– मुनकर को खत्म करके, उसकी जगह अच्छाई को क़ायम कर दिया जाये।

2– मुनकर को पूरी तरह से खत्म न किया जा सके, फिर भी उसकी तेज़ी में कमी कर दी जाये।

3– एक मुनकर को मिटाया जाये और उसी प्रकार का दूसरा मुनकर पैदा हो जाये।

4– मुनकर को मिटाने के नतीजे में उससे ज़्यादा खतरनाक मुनकर उठ खड़ी हो।

पहले दो दर्जों में ''नही अनिल मुन्कर'' (बुराई से रोकने) का फरीज़ा अन्जाम देना शरीअत का बुनियादी तक़ाज़ा है। तीसरा दर्जा इज़्तिहाद के दर्जे में है। यानी इसमें ग़ौरो फ़िक्र के बाद कोई एक पहलू इख्तियार किया जा सकता है। लेकिन चौथे दर्जे में मुनकर से टकराना हराम है। चुनांचे तुम अगर गुन्डे लोगों को शतरंज बाज़ी में मगन पाओ तो तुम अगर उन्हें शतरंज से रोक कर किसी ऐसे खेल में लगा सको जो खुदा और रसूल सल्ल० ने पसन्द किया हो। मसलन तीर चलाना, या घुड़सवारी वगैरा तो ''बहुत अच्छा'' वरना यूं ही उनको तुम्हारा रोकना हिकमत और समझदारी के विरुद्ध होगा। इसी तरह एक जगह तुम देखते हो कि नाफरमानों का मजमा है, खेल तमाशों में दाद दी जा रही है या नाच–गाने की महफिल जमीं हुई है, तो

अगर तुम किसी उपाय से उन्हें अल्लाह की इताअत व इबादत की ओर लगा सको तो यह वाकई मकसूद और मतलूब (आपेक्षित) है और अगर यह न किया जा सके तो उनको अपने हाल में मस्त रहने देना उससे बेहतर है कि तुम उन्हें भयानक फ़ितना व फसाद के लिये छोड़ दो, हालांकि जिस चीज़ में वह अब मस्त हैं वह उन्हें इस फितने से रोके हुये है। ऐसे ही अगर एक व्यक्ति अश्लील क़िस्से कहानियों की किताबें पढ़ने में मग्न है। अगर उसे ऐसी चीज़ों के अध्ययन से मना करने का नतीजा यह हो कि वह बिदअत व गुमराही और जादू-शोबदे की किताबों की ओर पलटेगा तो उसे पहले नोइयत की किताबों ही में व्यस्त रहने दिया जाये। इस प्रकार की अनगिनत मिसाले पेश की जा सकती हैं। शेखुल इस्लाम इब्ने तैमिया रह० फ़रमाते थे कि तातारियों के फ़ितने के ज़माने में हमारा गुज़र एक गिरोह पर हुआ जो शराब व कबाब में मस्त था। मेरे एक साथी ने उन लोगों को शराब पीने से मना करना चाहा, मगर मैंने उसे टोका कि अल्लाह के बन्दे शराब अल्लाह के ज़िक्र से और नमाज़ से रोकती है, इसलिए अल्लाह तआला ने उसे हराम कर दिया है और यहां हाल यह है कि शराब इन ज़ालिमों को बड़े फ़ितने यानी क़त्ल व खूंरेज़ी, माल की तबाही और औरतों और बच्चों पर ज़ुल्म व ज़्यादती से रोके हुये है लिहाज़ा इनको उनके हाल ही पर छोड़ दिया जाये।

***हाथ काटने के हुक्म में मसलहत का लिहाज़ :-***

नबी सल्ल० ने जंग के मौक़े पर चोरों के हाथ काटने

से मना फ़रमाया है। (अबूदाउद) हाथ काटना अल्लाह तआला की निर्धारित सज़ाओं में से एक सज़ा है लेकिन चूंकि जंग के दौरान सज़ा देने में आशंका है कि मुजरिम शैतानी विचारों और नफ़्सानी जोश से प्रभावित होकर काफ़िरों और मुश्रिकों से जा मिले और यह बात खुदा के नज़दीक सज़ाओ को छोड़ देने या टाल देने से ज़्यादा नापसन्दीदा है। इसलिए रसूलुल्लाह सल्ल० ने जंग के दौरान उसे लागू करने से मना फरमा दिया। जैसा कि हज़रत उमर रज़ि०, हज़रत अबू दर्दा रज़ि० और हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० वगैरा ने फ़रमाया है, इसी आधार पर इस्लामी विद्वानों में से इमाम अहमद बिन हम्बल रह०, हज़रत इसहाक रह०, हज़रत इमाम औज़ायी रह० और दूसरे विद्वानों ने यह उसूल अपनाया है कि ..... दुश्मन की सरज़मीन में अल्लाह की हदें (सज़ाये) जारी न की जायें। अबुल क़ासिम खरक़ी रह० ने भी अपनी ''मुख्तसर'' में इस उसूल को बयान किया है, लेकिन उनके अल्फाज़ यह हैं.....दुश्मनों के इलाके में किसी मुसलमान पर हद जारी नहीं की जायेगी।

एक बार जंग के मौक़े पर एक फौजी ने बशर बिन अवतात की ठाल चुरा ली, उसे जब गिरफ्तार करके हज़रत बशर रज़ि० के सामने लाया गया तो उन्होंने फ़रमाया– ''अगर मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० को यह फ़रमाते न सुना होता कि जंग के दौरान हाथ न काटे जायें तो ज़रूर तेरा हाथ काट देता''। (अबू दाउद)

अबु मुहम्मद अल मक़दसी रह० कहते हैं कि ''इस उसूल पर तमाम सहाबा रज़ि० का इज्माअ (सहमति) है। सईद बिन मन्सूर ने सुनन में अहवस बिन हकीम की सनद से रिवायत किया है। कि हज़रत उमर रज़ि० ने फौजियों के नाम फ़रमान जारी किया था कि ''किसी सिपहसालार (सेना नायक) किसी सरदार या किसी मुसलमान पर जंगी हालत में हद जारी न की जाये यहां तक कि वह सरहदों को पार करके अपने इलाके में न आ जाये। कहीं ऐसा न हो कि इस पर शैतानी लज़्ज़ा का ग़लबा हो जाये और वह काफ़िरों से जा मिलें''।

हज़रत अबू दर्दा रज़ि० से भी ऐसा ही वर्णित किया है। हज़रत अलकमा रज़ि० का बयान है कि हम एक लश्कर में थे जिसने रोम पर हमला किया था। हज़रत हुजैफ़ा बिन यमान भी हमारे साथ थे। वलीद बिन उत्बा हमारे सरदार थे उन्होंने वहां शराब पी ली। हमने उन पर हद जारी करना चाही, मगर हज़रत हुज़ैफा रज़ि० ने रोक दिया और कहा ''क्या तुम इस हाल में अपने अमीर पर हद जारी करना चाहते हो जब कि दुश्मन तुम्हारे सामने है। इसका नतीजा यह होगा कि तुम पर दुश्मन का हौसला बढ़ जायेगा।

कादसिया की जंग में हज़रत साद रज़ि० बिन अबी वक़ास के पास अबू महजन सकफ़ी शराब पीने के जुर्म में गिरफ्तार हो कर आये। हज़रत साद रज़ि० ने उन्हें क़ैद कर दिया। जब जंग शुरू हुई तो हज़रत अबू महजन रज़ि० ने इस्लामी फ़ौज के हालात देख कर कहा-- ''बड़े रंज की बात

है कि दुश्मन के भाले हमारे घोड़ों को पीछे ढकेलते रहें और मैं यहां जंजीरों में जकड़ा हुआ पड़ा रहूँ।

आख़िरकार हज़रत अबू महजन रज़ि० ने हज़रत साद रज़ि० की बीवी से गुज़ारिश की कि आप मुझे खोल दें, अगर खुदा ने मुझे रख लिया तो वापस आकर यह जंजीर पांव में डाल लूंगा और अगर मारा गया तो झगड़ा ही खत्म हो जायेगा। हज़रत साद रज़ि० की बीवी ने जंजीर से उनके पांव खोल दिये। उन्होंने हज़रत साद रज़ि० ही का घोड़ा लिया (जो संयोग से बचा था क्योंकि हज़रत साद रज़ि० उस रोज़ तकलीफ़ की वजह से जंग के लिये न निकल सके थे) और काफिरों के लश्कर पर हमला बोल दिया और इस क़दर साहस व बहादुरी का प्रदर्शन किया कि जिस तरफ टूट पड़ते, काया पलट देते थे। उनके हैरत में डाल देने वाले कारनामें को देखकर लोगों में काना फूसी होने लगी कि शायद यह कोई फ़रिश्ता आस्मान से मदद के लिए उतर आया है। हज़रत साद भी उनकी यह बहादुरी उज़ैब नामक मुक़ाम पर बैठे देख रहे थे और वाह-वाह कह रहे थे, आख़िरकार हज़रत अबू महजन रज़ि० ने दुश्मन को पछाड़ दिया और वापस आकर वादे के मुताबिक़ बेड़ियां पहन लीं। हज़रत साद रज़ि० की बीवी ने उनके सामने यह सारा क़िस्सा बयान किया। हज़रत साद रज़ि० ने यह सुनकर फ़रमाया खुदा की क़सम मैं ऐसे व्यक्ति को हरगिज़ सज़ा न दूंगा जिसने मुसलमानों की खातिर इस क़दर जान की बाज़ी लगायी है। हज़रत अबू महजन रज़ि० ने इस फैसले से

प्रभावित होकर कहा ''जब मुझे कोड़े मारकर पाक किया जाता था तो मैं बराबर शराब पीता रहा। अब जब आपने मेरी हद (सज़ा) खत्म कर दी है तो खुदा की क़सम मैं अब इस बला को मुंह नहीं लगाउंगा''।

इसमें कोई बात, क़ुरआन व सुन्नत या उसूले शरीअत में से किसी उसूल के खिलाफ नहीं है न इजमाअ के मुखालिफ़ है बल्कि अगर यह दावा किया जाये कि इसी पर सहाबा रज़ि० का इज्माअ (किसी मसले में) है तो ज़्यादा सही होगा। चुनांचे शेख इन क़ुदामा रह० अपनी किताब अलमुगनी में लिखते हैं ''यह मुत्तफिक अलैह है इसमें किसी का इख्तिलाफ़ ज़ाहिर नहीं हुआ''

इस वाक़िये को बयान करने के बाद इमाम इब्ने क़य्यिम रह० हद की ताखीर की ज़रूरत पर टिप्पणी करते हुये लिखते हैं कि मेरे नज़दीक इससे ज़्यादा से ज़्यादा यह साबित होता है कि हद को लागू करने में यह देरी तो बड़ी मसलहतों में से किसी एक मसलहत की बिना पर की जा सकती है। एक यह कि खुद मुसलमानों को एक अनुभवी सिपाही की ज़रूरत हो और दूसरे यह कि मुजरिम के दीन से फिर जाने और काफिरों से मिल जाने का खतरा हो। बीमारी की बिना पर हद को टाल देने की वजाहत खुद शरीअत में मौजूद है। मसलन हामला (गर्भवती) औरत की या जिस औरत का बच्चा दूध पीता हो उसकी हद टाल दी जाती है। मरीज़ पर बीमारी की हालत में हद जारी करना मना है। सख्त गर्मी और सख्त सर्दी के वक्त भी हद लागू करना

जायज़ नहीं है। लिहाज़ा अगर शरीअत में मुजरिम (एक व्यक्ति) के मसलहतों का लिहाज़ करके हद टाली जा सकती है तो ज़ाहिर है कि दीन की मसलहतों की खातिर उसको टालना और ज़्यादा जाइज़ होना चाहिये।

साद बिन अबी वकास रज़ि० ने अबू महजन रज़ि० के साथ जो मामला किया उस से यह शुब्हा पैदा होता है कि हज़रत साद रज़ि० ने अबू महजन रज़ि० पर से हद नहीं टाला बल्कि खत्म ही कर दी थी। तो क्या हद निरस्त कर देना जायज़ है? इसका जबाव यह है कि पहले तो हमारे लिये हज़रत साद रज़ि० का यह अमल दलील और नमूना नहीं है (कि इससे हद को निरस्त कर देने का उसूल बना लिया जाये) और दूसरा यह कि जो लोग हज़रत साद रज़ि० के कौल से साक्ष्य लाते है कि वह भी इससे सिर्फ यह निष्कर्ष निकालते हैं कि दारूल हर्ब (वह देश जहां ग़ैर मुस्लिमों की हुकूमत हो और मुसलमानों को उनके मज़हबी फ़रीज़ों से रोका जाये) में मुसलमान पर हद वाजिब नहीं हे जैसा कि इमाम अबू हनीफ़ा रह० का कथन है। ज़ाहिरी तौर पर ऐसा मालूम होता है कि हज़रत साद रज़ि० ने इस मामले में अल्लाह के सुन्नत की पैरवी की है। चुनांचे हज़रत साद रज़ि० ने जब अबु महजन रज़ि० के अन्दर दीन के ग़ैर मामूली असर, जिहाद का जज़्बा और जान लुटा देने का शौक़ देखा तो उनकी हद को माफ़ कर दिया। इसलिए कि अबु महजन रज़ि० से जिन नेकियों का ज़हूर हुआ वह उनकी एक बुराई पर छा गयीं और इसकी मिसाल उस

नापाक क़तरे की सी हो गयी जो समन्दर में मिल गया हो। इसके अलावा मैदाने जंग में हज़रत साद रज़ि० ने अपनी ऑखों से ख़ुद अबु महजन रज़ि० की सच्ची तौबा के आसार देख लिया। यह वह वक्त था जबकि किसी मुसलमान के ताल्लुक से यह शुब्हा नहीं किया जा सकता कि वह ऐसे आड़े वक्त में भी जब कि मौत को अपने सामने देख रहा हो, और हर पल दरबारे इलाही में हाज़िरी का ख्याल हो, अपने गुनाह पर अड़ा रहेगा इस से बढ़कर यह कि उन्होंने ख़ुद अपने आपको हवाले करके और अपने पांव पर अपनी मर्ज़ी से ख़ुद बेड़ियां डाल कर यह साबित कर दिया कि वह हक़ीक़त में इस बात के पात्र और हकदार हैं कि उनकी सज़ा को माफी के स्वच्छ जल से धोया जाये।

***आदेशों को लागू करने में हिकमते नबवी की नज़ीरें :***

इस तफसील के बाद इमाम इब्ने कय्यिम रह० ने नबी सल्ल० के अमल की कुछ नज़ीरें प्रस्तुत की हैं, जिनसे इस क़िस्म की रियायत साबित हैं–

1– एक शख्स ने नबी सल्ल० की खिदमत में हाज़िर होकर अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह मैं हद (सज़ा) का मुस्तहक़ (अधिकारी) हो गया हूँ, मुझ पर हद जारी कर दीजिए। आप सल्ल० ने पूछा ''क्या तूने अभी हमारे साथ नमाज़ पढ़ी है? उसने अर्ज़ किया ''जी हॉ'' फ़रमाया ''जा'' अल्लाह ने तेरा जुर्म माफ कर दिया'' इस माफी और हद को खत्म करने की बर्कत इस तरह ज़ाहिर हुयी कि उसने सच्चे दिल से तौबा कर ली और वहीं ऐलान कर दिया'' ख़ुदा की .कसम मैं अब

कभी शराब नहीं पियूंगा'' एक और रिवायत में है कि उसने कहा ''तुम्हारे कोड़ों की वजह से मैं शराब छोड़ देना अपनी शान के खिलाफ़ समझता था। जब तूने मुझको छोड़ दिया तो खुदा की कसम मैं आइन्दा इस मलऊन (घृणित) को हाथ नहीं लगाऊगा''।

2- हज़रत खालिद रज़ि० ने कबीला बनी हज़ीमा के साथ जो मामला किया था, उसका इल्म जब रसूलुल्लाह सल्ल० को हुआ तो आप सल्ल० ने सिर्फ इतना फ़रमाया- ऐ अल्लाह जो काम खालिद रज़ि० ने किया है मैं तेरे हुजूर उससे बरी होने का इज़हार करता हूँ। जनाब रिसालत माब सल्ल० ने हज़रत खालिद रज़ि० की बेहतरीन सलाहियतों, महत्वपूर्ण सेवायें और इस्लाम की मदद का लिहाज रखते हुये उससे ज़्यादा उन पर किसी क़िस्म की गिरफ्त नहीं की। बहेरहाल यह उसूल बड़ी अहमीयत और फायदे रखता है और उसके बारीकियों और गहराईयों तक सिर्फ वही पहुँच सकता है जो हुक्म व मनाही और सवाब व अज़ाब के आपसी सम्बंधों का गहराई से अध्ययन करेगा। जिस तरह अल्लाह तौबा कर लेने वाले को अज़ाब नहीं देता, उसी तरह तौबा करने वाले पर हद भी नहीं क़ायम की जाती। चुनांचे खुद अल्लाह तआला ने साफ-साफ हुक्म के ज़रीये उन दंगाइयों और फ़सादियों पर हद नहीं लागू किया है जो मुसलमानों के काबू में आने से पहले तौबा करलें। इस हुक्म में यह चेतावनी मौजूद है कि जब इस क़दर संगीन जुर्म की सज़ा तौबा और अल्लाह की तरफ पलटने से माफ़ हो

सकती है तो फ़ितना व फ़साद से कमतर जुर्म की सज़ा, तौबा व इस्तेगफ़ार से तो सबसे पहले माफ़ होनी चाहिए।

3– नसई की एक रिवायत में दर्ज है कि एक औरत अन्धेरे में सुबह की नमाज़ के लिये मस्जिद की तरफ़ निकली। रास्ते में एक शख्स ने उस पर हाथ डाला और उसकी इज्ज़त लूटने लगा। औरत ने शोर मचाना शुरू किया और करीब से गुज़रते हुये एक शख्स को मदद के लिये पुकारा। वह शख्स जब आया तो मुजरिम भाग गया। वह उसके पीछे दौड़ा। इतने में कुछ और लोग गुज़रे। औरत ने उनसे भी फ़रियाद की। वह भी फ़ौरन मुजरिम की तलाश में दौड़े । मुजरिम तो कहीं आगे निकल गया और उन्होंने उसी शख्स को पकड़ लिया जो खुद औरत की मदद को निकला था। उसको पकड़ कर औरत के पास ले आये। उसने कहा मैं तो उस की मदद को आया था। जिस शख्स ने उस की इज़्जत पर हमला किया था वह भाग गया है, मगर किसी ने उसकी न सुनी। आखिरकार वह लोग उसे नबी सल्ल० की ख़िदमत में ले आये। औरत ने हुज़ूर सल्ल० से अर्ज़ किया किया कि इसी शख्स ने मेरी इज्ज़त लूटी है लोगों ने भी कहा कि हमने इस शख्स को भागते हुये पकड़ा है। उस शख्स ने हुज़ूर सल्ल० से अर्ज़ किया, मैं तो दरअस्ल उस औरत की फ़रियाद सुनकर मदद के लिये आया था और मुजरिम को पकड़ने के लिये दौड़ रहा था कि इन लोगों ने रास्ता में मुझे दौड़ते हुये पाया और पकड़ लिया। औरत ने कहा झूठ कहता है, इसी ने मुझ पर हमला किया था ''हुज़ूर सल्ल० ने

हुक्म दिया इसे ले जाओ और संगसार (पत्थर मार कर) खत्म कर दो। मजमें में से एक शख्स ने उठकर कहा ''उस को संगसार न करो, मुझे संगसार करो। यह जुर्म मैंने किया है'' अब तीनों फ़रीक़ रसूलुल्लाह सल्ल० के सामने मौजूद थे। एक जिसने इज़्ज़त लूटी, दूसरा जो औरत की मदद के लिए बढ़ा था और तीसरी खुद वह औरत। आपने पहले व्यक्ति (इकबाली मुजरिम) से फरमाया ! तुझे तो अल्लाह ने माफ़ कर दिया। दूसरे व्यक्ति के बारे में भी तारीफ़ी जुमले कहे। हज़रत उमर रज़ि० ने अर्ज़ किया- या रसूलुल्लाह ज़िना (व्यभिचार) इकबाली मुजरिम को संगसार कीजिये ''मगर आप सल्ल० ने इनकार किया और फ़रमाया ''इसने अल्लाह से तौबा कर ली।''

इस वाक़िये को बयान करने के बाद अल्लामा इब्ने क़य्यिम रह० ने इस आपत्ति का जवाब दिया है कि हुज़ूर सल्ल० ने जुर्म के सुबूत या इकरार के बगैर औरत के मददगार को क्यों संगसार करने का हुक्म ज़ारी किया था। इमाम मौसूफ़ ने हुज़ूर सल्ल० के इस फ़ैसले को फौजदारी मुक़दमों के तौर तरीक़े और ज़ाहिरी हालात के साक्ष्य के लिहाज़ व सनद की सबसे बड़ी दलील क़रार दिया है, बल्कि उन्होंने उपर्युक्त वाकिया की तमाम जुज़ियात पर क़ानूनी नुक़ता-ए-नज़र से बहस करने के बाद साबित किया है कि आप सल्ल० का फ़ैसला बिल्कुल दुरुस्त और क़ानून के तकाज़े पर आधारित है। इसी सिलसिले में इमाम मौसूफ़ ने यह उसूल नकल किया कि..... हुक्म ज़ाहिरी दलीलों के

तहत जारी होगा और आखिर में लिखा है :

रहा ज़िना की स्वीकृति पर हद (सजा) को निरस्त कर देना, तो जब अमीरूल मोमिनीन उमर रज़ि० खिताब जैसे शख्स का दामनेउफ्व वसी न हो सका तो फक़ीहों (इस्लामी क़ानूनदानों) की बड़ी तादाद के नज़दीक इस वुसअत के न होने की और ज़्यादा सम्भावना है लेकिन अल्लाह तआला के दामनेउफ्व में उसके लिये जगह थी, इसलिए उसने फ़रमा दिया कि ''यह अल्लाह से तौबा कर चुका है'' और सज़ा देने से हाथ उठा लिया। बेशक अस्ल मुजरिम ने अपनी मर्जी से अपने जुर्म को कुबूल करके जिस नेकी का प्रदर्शन किया है वह सिर्फ अल्लाह ही के खौफ़ और डर से सम्भव हो सकता है। इसका एक मुसलमान आदमी की मौत के मुंह से बचा लेना और अपनी ज़िन्दगी पर अपने भाई की ज़िन्दगी को प्राथमिकता देना और अपनी ज़ात को खुद मौत के लिये पेश कर देना वह इतनी बड़ी नेकी है कि उसके मुक़ाबले में उससे सरज़द होने वाला गुनाह बिल्कुल हेच है चुनांचे नेकी की दवा ने बुराई की बीमारी को रोक दी, मरीज की क़ूव्वते मुदाफेअत (रक्षा शक्ति) बहाल थी इसलिए मर्ज खत्म हो गया और दिल में नये सिरे से ताकत पैदा हो गयी और अदालते नबवी से उसे यह फैसला दे दिया गया कि अब हम सजा नाफिज़ करने की ज़रूरत नही समझते। क्योंकि सज़ा पाकीजगी और इलाज ही के लिए इख्तियार की जाती है। जब तू सज़ा के बगैर ही पाक और तन्दरूस्त हो गया है तो हमारी माफ़ी ने तेरे लिये अपना दामन बिझा दिया है।

सुब्हानल्लाह, कौन सा फैसला इस फैसले से बेहतर होगा जो रहमदिली से भरपूर है और हिकमत और मसलहत के भी मुताबिक है।

### *सूखे के ज़माने में चोर के हाथ काटने की मनाही और उसकी वजह :–*

हज़रत उमर रज़ि ने अकाल के दौरान चोर के हाथ काट देने की सज़ा को निरस्त कर दी थी और फ़रमाया था ''खजूर की चोरी और अकाल में हाथ न काटे जायें।'' अलसअदी कहते हैं, मैंने अहमद बिन हम्बल रह० से पूछा ''क्या आपकी भी यही राय है? फरमाया ''बेशक'' मैंने दुबारा पूछा ''क्या अकाल के ज़माने में चोरी की जाये तो आप हाथ न काटेंगे'' फ़रमाया ''नहीं'' अगर सूखा पड़ गया हो और लोगों पर सख्ती गुज़र रही हो। ऐसी हालत में अगर कोई व्यक्ति ज़रूरत से मजबूर होकर चोरी करे तो मैं उसे हाथ काटने की सज़ा नहीं दूंगा''।

अलसअदी कहते हैं कि हज़रत उमर रज़ि० ने हातिब के ग़ुलामों के बारे में जो रवइया अपनाया था वह भी इस राय की पुष्टि करता है। इसकी तफ़सील यह है कि हातिब के ग़ुलामों ने मुज़निया क़बीले के एक शख्स की ऊंटनी चुरा ली। वह गिरफ्तार करके हज़रत उमर रज़ि० की ख़िदमत में पेश किये गये। हज़रत उमर रज़ि० के सामने उन्होंने चोरी का एतेराफ़ कर लिया। आपने हातिब के बेटे अ० रहमान रज़ि० को बुलाकर घटने की ख़बर दी और कसीर बिन सलत को ग़ुलामों के हाथ काटने का हुक्म

दिया। जब वह गुलामों को सज़ा देने के लिये चले तो आपको फ़ौरन सचेत किया गया और उन्हें रोक दिया और फ़रमाया–

''तुम लोग उन ग़रीबों से काम लेते हो मगर उनको भूखा मार देते हो और इस हाल में पहुंचा देते हो अगर उन में से कोई हराम चीज़ भी खाले तो उसके लिये जाइज़ हो जाये। ख़ुदा की क़सम अगर मैं यह जानता होता तो ज़रूर उनके हाथ काट देता, मगर अब उनके हाथ काटने के बजाये तुम पर ऐसा तावान (जुर्माना) डालूंगा कि तुम्हारे होश ठिकाने आ जायेंगे।''

इसके बाद आपने मुज़नी से ऊंटनी की क़ीमत पूछी। उसने चार सौ दिरहम बतायी। आपने गुलामों के मालिकों को हुक्म दिया, उसे आठ सौ दिरहम प्रदान करो''

हज़रत इमाम अहमद बिन हम्बल रह० ने उन दोनों हालतों में हज़रत उमर रज़ि० का तरीक़ा इख्तियार किया है। इसमाईल बिन सईद साखनी किताब ''अलमसाइल''– जिस की व्याख्या अलसअदी ने ''अलमुतरजिम'' के नाम से की है– में लिखा है कि अलसाअदी ने इमाम अहमद बिन हम्बल रह० से सवाल किया कि ऐसे व्यक्ति के बारे में आपका क्या फ़ैसला है जो किसी आदमी के दरख्त से फल चोरी कर ले ? इमाम साहब रह० ने फ़रमाया– मालिक को दोगुनी क़ीमत दिलवाई जायेगी और चोर को कड़ी सज़ा दी जायेगी। और फ़रमाया हम जिससे हद और क़िसास को टाल देते हैं उस पर तावान (जुर्माना) दो गुना लगा देते हैं,

खुश्क साली में चोरी की हद के ख़त्म कर देने पर ईमाम अवज़ाई रह० की भी वही राय है जिसे इमाम अहमद बिन हम्बल रह० ने इख्तियार किया है। यह राय सरासर और शरीअत के उसूल के तकाज़ों पर आधारित है, क्यों कि जब अकाल पड़ जाता है और भुखमरी फैल जाती है तो अवाम मूल आवश्यकताओं से इतने मजबूर हो जाते हैं कि चोर के लिये भी अपनी ज़िन्दगी को बचाये रखने के लिये बुनियादी ज़रूरतों के दबाव से सुरक्षित रहना असम्भव हो जाता है और ऐसी परिस्थितियों में खुद मालिक का भी फर्ज़ होता है कि वह मुहताज की ज़रूरत को मुआवज़ा लेकर या बिला मुआवज़ा पूरी करे। इस बारे में जबकि मतभेद है लेकिन सही क़ौल यही है कि बिला मुआवज़ा जरूरत पूरी करें। इसलिए कि इस्लाम ने हर शख्स पर वाजिब ठहराया है कि वह दूसरे भाई पर दया करे। सामर्थ्य और शक्ति हो तो इन्सानी जानों को बचाये और ज़रूरत से ज़्यादा माल को मुहताज़ों पर खर्च करे जब कि वह ज़िन्दगी की बुनियादी ज़रूरतों से भी तंग हो।

अल्लामा मौसूफ रह० ने इस मौक़े पर उन आशंकाओं और गुन्जाइशों को बयान किया है जिनको फक़ीहों ने चोरी की हद को निरस्त कर देने के लिये प्रभावपूर्ण और विश्वसनीय माना है और फिर इमाम रह० ने पूरी क़ूव्वत के साथ साबित किया है कि अकाल और भुखमरी में भी हद को ख़त्म करने के लिये बहुत मज़बूत शुब्हा है बल्कि इन सारे सन्देहों और आशंकाओं से ज़्यादा

मज़बूत और क़ाबिले लिहाज़ है जिनको इस्लामी फकीहों और क़ानूनदानों ने क़ुबूल किया है, इसी सिलसिले में फ़रमाते हैं- अकाल पड़ जाने में मुहताजों और भुखमरों की अधिकता होती है और यह फ़र्क करना मुश्किल होता है कि कौन बेनियाज है और कौन बिला वजह चोरी करने वाला है, और किसने ज़रूरत से विवश होकर चोरी की है और उससे यह बात संदेहास्पद हो जाती है कि कौन वास्तव में हद का पात्र है और कौन नही है। (लिहाजा सब पर से हद खत्म कर दी जाती है) मगर जब यह स्पष्ट हो जाये कि चोरी करने वाले को वाक़ई इस गलत क़दम उठाने की ज़रूरत न थी तो उसका हाथ ज़रूर काट दिया जायेगा।

### *हुक्म की ताबीर में उर्फ़ व आदात का लिहाज़ :*

नबी सल्ल० ने सदका-ए-फित्र में खजूर, जौ, किशमिश और पनीर का एक साअ (234 तोला) वाजिब फ़रमाया है आप सल्ल० के ज़माने में मदीना वासियों की यही गिज़ायें थीं लेकिन अगर किसी शहर या बस्ती के निवासियों की गिज़ा उनसे मुखतलिफ़ हो। मिसाल के तौर पर वह मकई या चावल, इन्जीर या इसी तरह कोई दूसरा अनाज या और कोई चीज़ खाते हों तो वह इसी में से एक साअ अदा करेंगे, बल्कि अगर किसी आबादी की आम गिज़ा अनाज़ न हो बल्कि दूध, गोश्त, मछली आदि हो तो बहरहाल जो गिज़ा भी होगी उसी में से वह सदका-ए-फित्र अदा करने के ज़िम्मेदार होंगे। जुम्हूर (सर्वसम्मत) उलमा का यही मसलक है और यही सही है क्यों कि साहिबे

शरीअत अलै० का अस्ल मन्शा यह है कि ईद के रोज़ ग़रीब व मिसकीन भूखे न रह जायें और लोग जो कुछ खुद खाते हों, उसी से ग़रीब भाईयों का भी ख्याल रखे। इसी लिहाज़ से ग़ल्ला के बजाये आटा भी सदक-ए-फित्र में दे देना काफी होगा। जबकि हदीस में इसका ज़िक्र नही है। रहा पके हुये खाने को सदक़ा में देना तो अगर्च एक लिहाज़ से गरीबों और मिसकीनों के लिये ज़्यादा बेहतर है क्योंकि उन्हें पकाने की तकलीफ और मेहनत नहीं उठाना पड़ेगा लेकिन दूसरे लिहाज़ से सूखे अनाज उनके लिए ज़्यादा कारामद हैं क्यों कि वह देर तक बाक़ी रह सकता है और दूसरे अनाज से जो ज़रूरतें पूरी की जा सकती हैं वह पके हुये खाने से नहीं की जा सकती खास तौर से जब ग़रीबों के घर में पका हुआ खाना अधिक मात्रा में जमा हो जायेगा तो उनके लिये उसे सुरक्षित रखना ना मुम्किन होगा और अधिकतर बर्बाद हो जायेगा। कुछ उलमा के निकट यह व्याख्या उचित नही है। उनके विचार में अस्ल मक़सद ग़रीबों को इस हद तक बेफिक्र कर देना है कि वह इस महान त्योहार में लोगों के सामने हाथ न फैलायें। जैसा कि नबी सल्ल० का इर्शाद है ''आज के दिन उनको मांगने से बेनियाज़ कर दो।'' आप सल्ल० ने अनाज को सदक़- ए-फित्र में देने का जो हुक्म फ़रमाया था तो उसकी वजह यह थी कि उस ज़माने में लोग ईद के रोज़ खास तौर पर कुछ पकाने-खाने के आदी न थे बल्कि ईद के रोज़ भी उनकी वही गिज़ा होती थी जो साल के दूसरे दिनों की होती थी। यही वजह है कि ईदुल अज़हा

को चूंकि मामूल (दिनचर्या) के विपरीत गोश्त होती थी। इसलिए उन्हें हुक्म दिया गया कि ''क़ुर्बानी के गोश्त में से खिलाओ सब्र करने वाले मुस्तहक को भी और परेशान हाल को भी) चुनांच अगर किसी शहर या बस्ती के लोग ईदुलफित्र के दिन खास तौर पर कुछ खाने पकाने के आदी हों तो उनके लिये ज़रूरी है कि वह उन्हीं खानों से गरीबों और मुहताजों की मदद करें।